Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

बिहार में कृषक आंदोलन : स्वामी सहजानंद सरस्वती के योगदान के विशेष संदर्भ में

कृपाल पासवान
शोध छात्र,
(नेट उतीर्ण) इतिहास विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत।

सारांश – विधानसभा में भी जमींदारों ने जमींदारी उन्मूलन विधेयक को पारित होने से रोकने के लिए भरपूर कोशिश की। उनकी तरफ से तीन और संशोधन पेश किए गए ताकि विधेयक जल्दी पारित न हो। लेकिन अंततः बिहार सरकार को 1947 में यह विधेयक पारित करना पड़ा और गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बाद 1948 में बिहार जमींदारी उन्मूलन कानून के रूप में इसे प्रकाशित किया गया।

मुख्यशब्द – बिहार,इकृषक आंदोलन, स्वामी सहजानंद सरस्वती, सरकार, विधेयक।

बिहार में कृषि आंदोलनों की शुरूआत 1917 के चम्पारण सत्याग्रह से हुई। यह पहला अवसर था जब बिहार के पारंपरिक किसान आधुनिक नेतत्व में आंदोलन में शरीक हुए। गांधी जी के नेतृत्व में इस आंदोलन को व्यापक समर्थन मिला, क्योंकि निलहों से समाज का हर तबका किसी–न–किसी कारण से असंतुष्ट था। खेतिहर मजदूर इसलिए असंतुष्ट थे कि उन्हें वर्तमान दर से मजदूरी नहीं मिलती थी और उनसे बेगार लिया जाता था। 'तीनकाठिया' व्यवस्था के चलते रैयतों में असंतोष था। इस व्यवस्था के तहत रैयतों को एक बिगहा में से तीन कठ्ठा जमीन में नील की खेती करना अनिवार्य बनाया गया था, वह भी कम मूल्य पर। इसके अलावा निलहे उनसे अबवाब और दस्तूरी तो लेते ही थे, साथ ही उनके अमले उन्हें परेशान भी करते थे। छोटे दुकानदारों को इस बात का गुस्सा था कि उन्हें स्वतंत्रा रूप से काम नही करने दिया जाता था और उनके उपर गैरकानूनी कर लगाए जाते थे। महाजनों एवं व्यापारियों के असंतोष का कारण यह था कि नील की खेती को वे व्यापार के रूप में बढ़ाने के लिए स्वतंत्रा नहीं थे। निलहे उनकी राह में रोड़ा बनकर खड़े थे। लिहों ने धनी किसानों और महाजनों द्वारा रैयतों को सूद पर पैसा दिये जाने से रोका भी, ताकि वे उसकी जमीन लेने में कामयाब न हों।[1] दूसरी तरफ निलहे रैयतों को अग्रिम भुगतान भी देते थे, वह भी बिना सूद के। इस तरह स्थानीय धनी किसानों और निलहों के बीच प्रतिस्पर्द्धा ने जन्म लिया।

चम्पारण सत्याग्रह आंदोलन में समाज के विभिन्न तबकों ने भागीदारी निभायी। लेकिन नेतृत्व मुख्य रूप से धनी किसानों, महाजनों धनी रैयतों, वकीलों एवं शिक्षकों के हाथों में ही रहा। चम्पारण सत्याग्रह के एक प्रमुख नेता राजकुमार शुक्ला, जिन्होंने गांधी जी को चम्पारण बुलाने मं महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, स्वयं एक महाजन थे। लौकरिया के खेंदर राय, मोतीहारी के साहा और बेतिया के मारवाड़ियों जैसे आंदोलन के नेता और समर्थक महाजन, व्यापारी ही

थे। अनेक ऐतिहासिक तथ्यों से यह साबित हो चुका है कि सत्याग्रह आंदोलन को गरीब और खेतिहर मजदूरों से कोई खास लेना–देना नहीं था।

चम्पारण सत्याग्रह कुल मिलाकर किसानों का व्यापक समर्थन जुटाने में असफल ही रहा। मुख्य रूप से वह नील की खेती और निलहो के खिलाफ ही सीमित रहा। उधर बिहार के अन्य भागों में कृषक असंतोष पनपता रहा। किसानों के प्रतिरोध को बर्बर तरीके से दमन करने के कई मामले सामने आऐ। लगान प्रणाली पर आधारित आर्थिक शोषण के अलावा जमींदार किसानों का कई तरह से गैर आर्थिक शोषण भी करते थे। उदाहरण के लिए कोई जमींदार अपने इलाके में यदि किसी को जमीन के हस्तांतरण की इजाजत देता था तो इसके एवज में उस व्यक्ति को सलामी देनी पड़ती थी। इनता ही नहीं, छोटी जातियों को कई बार पक्का मकान बनाने के लिए भी जमींदारों को सलामी देनी पड़ती थी। यह परम्परा मध्यवर्ती जातियों के नव धनाढ्यों को परेशान करने वाली थी, क्योंकि वे जल्दी–से–जल्दी और ज्यादा–से–ज्यादा जमीन हासिल करना चाहते थे और सलामी देने की परम्परा इसमें बड़ी बाध थी। इसी तरह ऊँची जातियों के जमींदारों ने छोटी जातियों के लिए कतिपय संस्कारों पर प्रतिबंध लगा रखा था। उदाहरण के लिए निम्न जातियों के लोग जनेउ धारण नही कर सकते थे या उनकी औरते जमींदारों के घरों में काम करने से मना नहीं कर सकती थीं। इन सब कारणों से छोटी जातियों के नव धनाढ्यों सहित अन्य लोगों में भी गुस्सा था, जिसके चलते तनाव की स्थिति बनने लगी थी। यह कहना गलत नहीं होगा कि किसान आंदोलन के उद्‌भव और विकास में जमींदारों के आर्थिक शोषण से ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका उनके उदंड और अपमानजनक व्यवहार की रही है।

कांग्रेस पार्टी जमींदारों के खिलाफ किसानों की लड़ाई को आगे बढ़ाने में सर्वथा असफल रही, यद्यपि स्वराज पार्टी ने रैयती कानून में संशोधन का प्रस्ताव भी किया था। इससे किसानों को थोड़ी आशा भी बंधे थी कि कांग्रेस उनकी लड़ाई लड़ेगी, लेकिन अंततः उन्हें निराशा ही हाथ लगी। उधर किसान आंदोलन के मुद्‌दे ठोस रूप से अख्तियार करते जा रहे थे। बेगार और अबवाब का सवाल किसानों एवं रैयतों के बीच तनाव का एक स्थायी मुद्‌दा बना हुआ था। जमींदारों एवं रैयत के बीच तनाव का दूसरा कारण कतिपय छोटी जातियों द्वारा अपनी सामाजिक हैसियत में सुधार का प्रयास था। इसके अलावा उत्पादन लगान को नगदी लगान में परिवर्तित करने से भी तनाव में वृद्धि हुई।

लेकिन तनाव का सबसे बड़ा कारण बना बकाशत जमीन। बकाश्त जमीन उस जमीन को कहा जाता था, जिसका वास्तविक मालिक रैयत होता था, लेकिन लगान न दे पाने के एवज में जमींदार उसे वापस ले लेते थे। जमींदार स्वयं खेती करने के नाम पर ऐसा करते थे, लेकिन वास्तव में वे बटाईदारों से ही खेती करवाते थे। खेती करने वाले ऐसे बटाईदार बहुत जमीन के वास्तविक मालिक होते थे। रैयती कानून में ऐसा प्रावधान था कि यदि रैयत साबित कर दे कि वह जमीन कम से कम एक साल के लिए भी उसके पास भी तो वह जमीन उसे वापस मिल जाएगी। इसलिए जमींदार रैयतों को ऐसी जमीन की लगान रसीद ही नहीं देते थे, जबकि रैयत उसकी लगान रसीद मांगते थे। रैयतों का आत्मविश्वास बढ़ने और राजनेताओं द्वारा कृषि संबंधी मुद्‌दों को उठाए जाने के कारण बकाश्त

जमीन का मुद्दा कृषि विवाद का केन्द्र बन गया। इस तरह दूसरे दशक का अंत होते–होते उक्त तत्वों के सम्मिश्रण से एक विस्फोटक स्थिति बन चुकी थी, या कहें कि उक्त सभी मुद्दों के मिल जाने से किसान आंदोलन की उपजाऊ जमीन तैयार हो चुकी थी।[2] इसी जमीन पर 1927 में किसान सभा ने जन्म लिया, जो 1929 में सारे बिहार में फैल गई और 1936 तक आते–आते पूरे देश में।

किसान सभा के गठन के साथ जहाँ पटना के रैयत संगठित होने लगे और उनकी शिकायतें व पीड़ा का प्रचार होने लगा, वही बिहार के अन्य हिस्सों के किसानों में भी आंदोलन का जज्बा पैदा होने लगा। इसी बीच काउंसिल में रैयती कानून से संशोधन के लिए विधेयक पेश हुआ, जिसका उद्देश्य जमींदारों को लाभ पहुँचाना था। काउंसिल में जमींदारों के वर्चस्व को देखते हुए इस बात में शकां की कोई गुंजाइश भी नहीं थी कि विधेयक पारित हो जाएगा। इसलिए रैयत नेताओं ने अखिल बिहार किसान सभा के गठन का निर्णय लिया ताकि विधेयक को खारिज करने के लिए बाहर से दबाव डाला जा सके।[3] कांग्रेसी व अन्य दलों के नेताओं से बातचीत के बाद स्वामी सहजानंद सरस्वती को नेतृत्व स्वीकार करने के लिए राजी किया गया। तय हुआ कि सोनपुर में किसानों के सलाना जलसे के दौरान बिहार प्रांतीय किसान सभा का गठन किया जाएगा। इस तरह 27 नवम्बर, 1929 को बिहार प्रांतीय किसान सभा का गठन हुआ। आश्चर्य है कि जयप्रकाश नारायण और रामवृक्ष बेनीपुरी जैसे समाजवादी नेताओं ने भी इसका विरोध किया विरोध करने वाले नेताओं का तर्क था कि चूँकि कांग्रेस ही असली किसान सभा है।[4] उनका यह भी कहना था कि भविष्य मे किसान सभा कांग्रेस की दुश्मन भी बन सकती है। बहरहाल, कुछ सालों बाद कांग्रेस के समाजवादी न सिर्फ किसान सभा में शामिल हुए, बल्कि जबर्दस्त उग्र तेवर भी दिखलाए और उन कांग्रेसियों की जमकर आलोचना भी की, जो कह रहे थे कि कांग्रेस ही असली किसान सभा है और इसलिए किसानों को अलग से संगठन की कोई जरूरत नहीं है। किसान सभा ने रैयती कानून में संशोधन के खिलाफ इतना जबरदस्त आंदोलन किया कि अंततः सरकार उसे खारिज करने के लिए बाध्य हो गई। इसके बाद कांग्रेस के राष्ट्रीय नेताओं ने भी किसान सभा का समर्थन किया। इससे और कुछ हुआ हो या नहीं, लेकिन किसान सभा से जुड़े स्थानीय नेताओं और कार्यकर्ताओं का मनोबल जरूर बढ़ा यही मनोबल आगे चलकर उन्हें सामाजिक मुद्दो से क्रांतिकारी किसान आंदोलन तक का सफर तय करने में सहायक बना। किसान सभा वास्तव में जन आंदोलन बन गया। स्थानीय स्तर पर किसान सभा की अगुआई करने वाले प्रमुख नेताओं में जमुना कार्थी, यदुनंदन शर्मा, कार्यानंद शर्मा, धनराज शर्मा, किशोरी प्रसाद सिंह, इंद्रदीप सिन्हा, शोगेन्द्र झा, शीलभद्र याजी आदि थे। दो साल बाद इन नेताओं और सभा की प्रतिष्ठा तब और बढ़ गई, जब राहुल सांकृत्यायन और नागर्जुन जैसे बुद्धिजीवियों और कांग्रेस सोशलिस्ट के जयप्रकाश नारायण, रामवृक्ष बेनीपुरी, गंगा शरण सिंह, अधेश्वर प्रसाद सिन्हा, रामनंदन मिश्र आदि नेता किसान सभा में शामिल हुए।[5] लेकिन संगठन की धुरी स्वामी सहजानंद सरस्वती और उनके पक्के समर्थक जदुनंदन शर्मा, जमुना कार्जी, कार्यानंद शर्मा और धनराज शर्मा आदि ही बने रहे।

किसान सभा के गठन के साथ सहजानंद और उनके सहयोगियों ने किसानो में राजनीतिक चेतना पैदा करने के उद्देश्य से न सिर्फ बिहार के विभिन्न जगहों का दौरा किया और भाषण दिए, बल्कि रैयतों को अपना

अधिकार पाने के लिए संघर्ष के लिए प्रेरित किया। परिणाम स्वरूप समूचे बिहार में किसान आंदोलनो का सिलसिला शुरू हो गया। किसान सभा ने कुछ बड़े ही महत्वपूर्ण आंदोलन किए। उदाहरण के लिए 1938–39 में डालमिया चीनी मिल बिहटा के खिलाफ संघर्ष, 1933 और फिर 1938 में रेवरा (गया) संघर्ष, बड़हिया टाला, रेवरा, मझियावां और अमवारी का बकाश्त आंदोलन। इसके अलावा शाहबाद जिले के बड़गांव और दरिगांव, सारण जिले के छितौली और परसादी, दरभंगा जिले के राघोपुर, देकुली आदि, पटना जिले के बेलदारीचक और जलपुर के अलावा भागलपुर और चम्पारण में अनेक जगहों पर किसान सभा ने जबरदस्त आन्दोलन किए। सरकार और जमींदारों ने बर्बर तरीके से आन्दोलन को दबाने की कोशिश की। अनेक जगहों पर पुलिस ने लाठी, गोलियां चलायीं और हजारों कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया। राहुल सांकृत्यायन, कार्यानंद शर्मा, पंचानन शर्मा आदि किसान सभा के नेताओं पर मुकदमें भी चलाए गए। इन सभी आंदोलनों में बड़हिया टाल का बकाश्त आंदोलन सबसे जबरदस्त रहा था। यह आंदोलन न सिर्फ सबसे लंबे समय तक चला, बल्कि रैयातों की जीत भी हईु जो आगे चलकर बिहार में कम्युनिस्ट पार्टी के गठन का आधार बना।[7]

इसी बीच 1934 में सहजानंद, गांधी जी और कांग्रेस से अलग हो गए। गांधी जी और कांग्रेस के समन्वयवादी नीतियों से सहजानंद का मोहभंग हो गया। कांग्रेस के नेता जमींदारों और रैयतों के बीच सामंजस्य और समझौते के हिमायती थे, जबकि स्वामी सहजानंद सरस्वती जमींदारों को फूटी आँखों भी देखना नहीं चाहते थे। वे कहा करते थे ''हमें मिट्टी का जमींदार भी गवारा नहीं क्योंकि वह भी उतना ही अत्याचारी होगा।[8] इसके बाद तो कांग्रेस किसान सभा की दुश्मन बन गयी और उसके प्रसार से हर तरह से अड़ंगा लगाने लगी। इधर किसान सभा किसानों को संगठित कर उन्हें आंदोलन के लिए तैयार कर रही थी, जबकि कांग्रेस पार्टी उधर 1937 में सता में आने के बाद जमींदारों से समझौता के लिए बातचीत करने में मशगूल थी। मौलाना अबुल कलाम आजाद और बाबू राजेन्द्र प्रसाद इस समझौते में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे। यह अलग बात है कि इस बात को कभी सार्वजिक नहीं किया गया कि समझौता की शर्ते क्या हैं या बातचीत का नतीजा क्या निकला?

सन् 1936 के अप्रैल में अखिल भारतीय किसान सभा का गठन किया गया और बिहार प्रांतीय किसान सभा उसकी संगठनिक इकाई बनी रही। इसकी पहल कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के नेता एन0जी0 रंगा ने की थी। अखिल भारतीय किसान सभा की पहली बैठक लखनऊ में हुई और सहजानंद सरस्वती को इसका अध्यक्ष बनाया गया। अखिल भारतीय किसान सभा को लेकर सहजानंद के मन में पहले से ही इस बात की शंका बनी हुई थी कि पूर्ण विकसित प्रांतीय इकाइयों के अभाव में राष्ट्रीय संगठन कोई प्रभावी भूमिका निभा पाएगा भी या नहीं। इसके बावजूद एक बाद इससे जुड़ जाने के बाद सहजानंद ने अखिल भारतीय किसान सभा को अपना पूर्ण सहयोग और समर्थन दिया, लेकिन उनका शक अंततः सही निकला। स्वामी सहजानंद सरस्वती ज्यादा दिनों तक कांग्रेस की नीतियों के साथ तालमेल नहीं बिठा सके। उन्हें महसूस होने लगा कि बिहार के अधिकांश कांग्रेसी नेता या तो स्वयं जमींदार है या जमींदारी से उनके हित प्रगाढ़ रूप से जुड़े हुए हैं। 1936 में राजेन्द्र बाबू ने बिहार कांग्रेस कमेटी को इस बात

के लिए राजी कर लिया कि किसान इंक्वाइरी कमेटी में सहजानंद को न रखा जाए। सहजानंद सरस्वती और कांग्रेस के बीच विभाजन का यह सबसे बड़ा आधार साबित हुआ।

इसके तुरंत बाद फैजपुर कृषि कार्यक्रम आया, जिसके आधार पर कांग्रेस ने 1937 का चुनाव लड़ा और सता में आई। इसके बाद कांग्रेस ने सहजानंद और किसान सभा को नीचा दिखाने का प्रयत्न शुरू किया और इस प्रयत्न की शुरूआत की स्वयं जवाहरलाल नेहरू ने। उन्होंने सहजानंद सरस्वती पर अप्रत्यक्ष रूप से आरोप लगाया कि वे किसानों को गलत तरीके से लुभाने की कोशिश कर रहे हैं। इसके बाद एक गुमनाम पुस्तिका वितरित की गई, जिसके मुखपृष्ठ पर जवाहरलाल नेहरू की तस्वीर छपी हुयी थी और उन्हीं के हवाले से उस पुस्तिका में कहा गया था कि कुछ लोग पीार्टी में ओहदा नहीं मिलने से नाराज होते हैं और किसान सभा बनाते हैं तथा उनके नाम पर निजी स्वार्थ साधते हैं। ऐसे चीजों को बर्दास्त नहीं किया जाएगा। इससे बल पाकर बिहार किसान सभा विरोधी तत्वों ने सहजानंद के खिलाफ अपना अभियान और भी तेज कर दिया, लेकिन इससे प्रभावित हुए बिना सहजानंद ने भूमि सुधार और मालगुजारी कम करने के लिए अपना अभियान जारी रखा। सरकार पर दबाव डालने के लिए उन्होंने पटना में अनेक प्रदर्शन आयोजित किये। कांग्रेस के सताधारी गुट ने आरोप लगाया कि इन सभाओं में 'कैसे लोग मालगुजारी, लठ्ठ हमारा जिंदाबाद' का नारा लगाकर किसानों को हिंसा के लिए उकसाया जा रहा है। किसान सभा की बैठक नहीं होने देने के लिए कांग्रेस सरकार ने कई जगह निषेधज्ञा भी लगाई। दरअसल कांग्रेस की परेशानी यह थी कि किसान सभा के आंदोलनो ंसे उसके और जमींदारों के बीच समझौते की बातचीत में खलल पड़ रही थी। यही कारण था कि बिहार प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने एक प्रस्ताव पारित कर कांग्रेस कार्यकर्ताओं को किसान सभा की गतिविधियों से अलग रहने को कहा।[9] सारण चम्पारण और मुंगेर के जिला कांग्रेस कमेटियों ने सहजानंद के वहाँ प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिये। जयप्रकाश नारायण जैसे कांग्रेस के प्रगतिशील तत्वों ने प्रदेश और जिला कांग्रेस कमिटियों के प्रस्तावों की जमकर निंदा की। इस तरह यह स्पष्ट हो गया कि कांग्रेस और किसान सभा साथ–साथ नहीं चल सकते। सहजानंद ने इसके बाद फारवर्ड ब्लाक के साथ सहयोग किया और अंगेजों एवं कांग्रेस के बीच समझौते के विरोध में सम्मेलन आयोजित किया। इसके बाद सहजानंद ने कम्युनिस्टों के साथ मिलकर भी काम किया लेकिन यह भी ज्यादा दिन तक नहीं चल सका। द्वितीय विश्व युद्ध में कम्युनिस्टों ने अंग्रेजों का साथ दिया, जबकि सहजानंदन ने फासीवाद के विरोध में लड़ाई का समर्थन तो किया लेकिन अंग्रेजों के अत्याचार का भी उतना ही तीव्र विरोध जारी रखा। युद्ध समाप्त होने के बाद कम्युनिस्ट पार्टी औपचारिक रूप से किसान सभा से अलग हो गई।[10] सहजानंद सरस्वती ने इसके बाद भी वाम एकता कायम करने का प्रयास किया लेकिन उसमें वे सफल नहीं हुए और किसान सभा धीरे–धीरे अनेक गुटों में विभाजित हो गई।

कृषि संबंधों के जिस चरित्र का उद्भव 1793 के स्थायी बंदोबस्त प्रणाली को लागू करने के परिणामस्वरूप हुआ, उससे छुटकारा पाए बिना न तो कृषि को विकसित किया जा सकता है और न कृषि संबंधों में परिवर्तन, यह आजादी की लड़ाई के दौरान ही साबित होने लगा था। बिहार में किसान सभा के माध्यम से स्वामी सहजानंद सरस्वती और राहुल सांकृत्यायन के नेतृत्व में किसानों ने जता दिया था कि उनमें उस व्यवस्था से छुटकारा

पाने की कितनी कसमसाहट है। आजादी के बाद किसानों के हितों एवं आकांक्षाओं को नजरअंदाज करना भारत और बिहार के नए शासकों के लिए संभव नहीं रह गया था। इसलिए भूमि सुधार के प्रयास शुरू हुए।

सन् 1944 में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में कृषि सुधारों से संबंधित एक कमेटी बनी, जिसमें जमींदारी उन्मूलन की अनुशंसा की गयी। इसके बाद 1948 में भारत सरकार ने एक दूसरी कमेटी जे0सी0 कुमारप्पा की अध्यक्षता में बनाई। इन कमेटियों की अनुशंसा पर ही देश में भूमि सुधार के प्रयास हुए। राज्य सरकारों से आग्रह किया गया कि वे तीन उद्देश्यों (1) जमींदारी उन्मूलन (2) काश्तकारी नियमों में सुधार तथा (3) भूमि हथबंदी को ध्यान में रखकर संबंधित राज्यों के लिए भूमि सुधार कानून बनाएं तथा लागू करें। चूँकि भूमि राज्य सूची में है, इसलिए यह जिम्मेदारी राज्य सरकारों पर डाल दी गई। इसके पीछे सरकारी मंशा कई तरह की थी–बिचौलियों (जमींदार) के हाथों से वास्तविक जोतदारों के हाथों में जमीन का हस्तांतरण, अनाज की उपज बढ़ाना और सबसे बढ़कर ग्रामीण आबादी में वर्तमान सामाजिक–आर्थिक विषमता को नियंत्रण में लाना तथा एक समतामूलक समाज की रचना करना।

बिहार में स्वामी सहजानंद सरस्वती, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के जयप्रकाश नारायण एवं कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडियों के कार्योनंद शर्मा की अगुआई में वहाँ के किसानों ने जमींदारी उन्मूलन के लिए जबरदस्त आंदोलन किया था। इन्हीं आंदोलनों दबाव में जब 1937 और 1946 में बिहार में कांग्रेस की सरकार बनी तो उसे भूमि सुधार के प्रति अपनी निष्ठा अपने प्रस्ताव में जाहिर करनी पड़ी। अपने प्रस्ताव में कृषि व्यवस्था में वैधानिक उपायों के जरिये परिवर्तन की बात रखने के लिए कांग्रेस को बाध्य होना पड़ा।[11]

जमींदारी उन्मूलन का इतिहास जितना तूफानी बिहार का रहा है उतना किसी अन्य राज्य का नहीं। कांग्रेस के घोषित उद्देश्य और तथाकथित प्रयासों के बावजूद जमींदारी उन्मूलन कानून बनने में पांच साल लग गए। जमींदारी उन्मूलन विधेयक पेश करने वाला बिहार देश का पहला राज्य था, लेकिन जमींदारों और भूस्वामियों के प्रबल विरोध के कारण अनेक वर्षो तक उसे कानून बनने से रोके रखा गया।

विधानसभा में भी जमींदारों ने जमींदारी उन्मूलन विधेयक को पारित होने से रोकने के लिए भरपूर कोशिश की। उनकी तरफ से तीन और संशोधन पेश किए गए ताकि विधेयक जल्दी पारित न हो। लेकिन अंततः बिहार सरकार को 1947 में यह विधेयक पारित करना पड़ा और गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बाद 1948 में बिहार जमींदारी उन्मूलन कानून के रूप में इसे प्रकाशित किया गया। ऐसा नहीं है कि कानून बन जाने के बाद जमींदार हार मानकर चुप बैठ गए। इसके विपरीत जमींदारों ने इसकी संवैधानिकता और वैधता को बार–बार अदालती चुनौती दी। बहरहाल, 1952 में जाकर बिहार भूमि सुधार कानून–1950 के रूप में लागू हुआ। इसके बाद जमींदारों ने सरकार के साथ असहयोग का रास्ता अपनाया और लगान की सूची और संबंधित गांवों के रिकॉर्ड देने में साफ मान कर दिया। सरकार के पास इसकी कोई जानकारी नहीं थी कि किसके पास कितनी जमीन है या कौन रैयत है और कौन अर्द्ध–रैयत। महत्वपूर्ण भू–अभिलेखों और रेकॉर्ड के अभाव में राज्य की भूसंपदा और उसके स्वरूप के बारे में सरकार अज्ञान बनी रही। जमींदारों ने सरकार की इस अज्ञानता का जमकर फायदा उठाया।

संदर्भ–सूची :

1. तेंदुलकर, डी.जी.–गाँधी इन चंपारण, पृ0 16
2. सिंहा, अनुग्रहनारायण– मेरे संस्मरण, पृ0 10
3. स्वामी सहजानंद सरस्वती – किसान सभा के संस्मरण, पृ0 19
4. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद – आत्मकथा – पृ0 106
5. डॉ0 आदित्य चन्द्र झा – आधुनिक भारत (1789–1974), पृ0 217
6. स्वामी सहजानंद सरस्वती – मेरा जीवन संघर्ष, पृ0 304
7. वही – पृ0 207
8. वही – पृ0 317
9. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद – आत्मकथा, पृ0 231
10. स्वामी सहजानंद सरस्वती – किसान सभा के संस्मरण, पृ0 121
11. डॉ0 आदित्य चन्द्र झा – लेबर मूवमेंट इन बिहार, पृ0 117.